International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(1): 106-109

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(1): 106-109
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 26-11-2016
Accepted: 27-12-2016

कैलाश चन्द्र भट्ट
(शोध छात्र, संस्कृत विभाग)
एस0एस0जे0 परिसर, अल्मोड़ा,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल
उत्तराखण्ड, भारत।

Correspondence
कैलाश चन्द्र भट्ट
(शोध छात्र, संस्कृत विभाग)
एस0एस0जे0 परिसर, अल्मोड़ा,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल
उत्तराखण्ड, भारत।

भारतीय संस्कृति में नारी का स्वरूप एवं महत्व

कैलाश चन्द्र भट्ट

प्रस्तावना

सम्पूर्ण विश्व में ईश्वर के पश्चात् यदि अन्य किसी को सृष्टिकर्ता के श्रेणी में रखा है तो वह केवल नारी ही है। समस्त जगत के प्रसार का आधार ईश्वर ने नारी को बनाया है। भारतीय संस्कृति और समाज में नारी का स्थान अत्यन्त विशिष्ट, आदरणीय तथा गौरवपूर्ण है। वह अपने श्रेष्ठतम संस्कारों से अपनी पवित्र परम्पराओं से तथा अपने सतत् सुकृत्यों से श्रेष्ठतम राष्ट्र का निर्माण करती है। नारी वात्सल्य, स्नेह, करूणा, शक्ति, साहस, सहनशीता आदि गुणों से सम्पन्न एक पावन चरित्र है इसीलिए भारतीय नारी को 'स्वामिनी', 'लक्ष्मी', 'गृहलक्ष्मी' तथा 'शक्ति' के रूपों में देखा जाता है।

परन्तु वर्तमान समय में पाश्चात्य सभ्यता के दुष्प्रभावों से वाङ्मय अत्यन्त दूषित सा हो गया है जहाँ आधुनिक रहन–सहन, फैशन, दूषित विचारों एवं मिथ्या मोहाकर्षण के अनुकरण द्वारा एक संस्कृति सम्पन्न मातृ शक्ति का स्वरूप बिगड़ता हुआ दृष्टिगोचर होता है। इस अवस्था में नारी का स्वरूप एवं महत्व पूर्ववत्, वैदिक कालवत् बना रहे इसका प्रयास वर्तमान में भी हमें करना चाहिए।

वैदिक वाङ्मय में नारी को विशिष्ट तथा गौरवपूर्ण स्थानों पर प्रतिष्ठित किया गया है। व्यावहारिक दृष्टि से पुरुषों की अपेक्षा नारियों को उत्कृष्ट सम्मान मिला है। महात्मा मनु सम्मानपूर्वक कहते हैं–

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता
यत्रैस्तास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया।।[1]

अर्थात् जहाँ स्त्रियों का आदर होता है वहाँ समस्त देवता प्रसन्न रहते हैं और जहाँ ऐसा न हो वहाँ उन लोगों के द्वारा किये गये यज्ञादि समस्त सत्कर्म व्यर्थ होते हैं।

'नारी' शब्द स्वयं में अत्यन्त व्यापक है। इस शब्द को कवियों, विद्वानों ने अनेक अर्थों में प्रयोग किया है। कवि की दृष्टि में नारी सहानुभूति की तरह प्रकृति की तरह बहुरूप धारी तथा माया की भाँति दुर्बोध है। इन व्यापक अर्थों के कारण 'नारी' शब्द अत्यन्त रहस्य एवं विस्तृत अर्थों वाला है। कहीं–कहीं नारी को मेना, स्त्री, योषा, वामा के नाम से भी सम्बोधित किया है।

ऋग्वेद में नारी शब्द यज्ञ के अर्थ में 'नार्यः' के रूप में प्रयुक्त हुआ है। नृ + अञ् + ङीन् (प्रत्यय) = नारी। ऋग्वेद में 'नृ' शब्द का प्रयोग वीरता का कार्य करना, दान देना तथा नेतृत्व के अर्थ में किया गया है। नृ से ही नारी बना इसलिए 'नारी' की भी यही विशेषतायें होनी चाहिए कि वे युद्धादि वीरतापूर्ण कार्यों में नर की सहायक बनें तथा दानादि कर्म करें पूर्व काल में माताओं ने 'नारी' नाम को सार्थक किया है। ध्यातव्य है जब दशरथ जी देवासुर संग्राम में पराजित होने लगे थे तब उनकी भार्या कैकई ने वीरतापूर्वक उस संग्राम में युद्ध किया तथा दशरथ के प्राणों की भी रक्षा की। नारी को कई स्थानों पर माता कहा गया। बड़े–बड़े लोग भी स्त्रियों के लिए सम्मानपूर्वक 'माता' शब्द का सम्बोधन करते हैं। ऋग्वेद में मातृ शब्द का अर्थ अन्तरिक्ष, नदी, जल, पृथ्वी आदि है। व्याकरण में मातृ शब्द हुआ मान् + तृच से बना है। मान् का अर्थ हुआ आदर तथा मातृ का अर्थ हुआ आदरणीय। निरूक्ताचार्य यास्क के मत में मातृ का अर्थ निर्मातृ से है अर्थात् निर्माण करने वाली यानी जननी।

वैदिक काल से पूर्व हड़प्पा सभ्यता तथा उससे भी पूर्व युग में स्त्री तथा पुरुषों के बीच कार्यों व शक्ति को लेकर भेद नहीं था क्योंकि तब मनुष्य आदिम युग में जी रहा था। जीविका का सवाधन आखेट व संग्रह हुआ करता था। तत्पश्चात् हड़प्पा काल में स्त्रियों की स्थिति उत्तम रही होगी। हड़प्पा कालीन अवशेषों में प्राप्त मातृ देवी की प्रतिमाओं से यह अनुमान किया जा सकता है कि उस समाज में स्त्रियों की स्थिति उच्च रही होगी। आगे बढ़ने पर वैदिक काल का समय आया 'ऋग्वेद' जैसे अतिशय ज्ञानवर्धक ग्रन्थों की प्राप्ति हुई। उस युग में आर्य लोग कृषि आदि का कार्य किया करते थे। बाह्य आक्रमण भी होते थे।

उन आक्रमणों से बचने के लिए व्यक्ति पुत्र की कामना करने लगा जिससे कि एक पुरुष प्रधान समाज के द्वारा बाह्य आक्रमणों पर नियन्त्रण हो। पुरुष प्रधान समाज होने पर भी मातृ शक्ति का सम्मान यथावत् था। उस काल की अनेकों विदुषी महिलाओं यथा–गार्गी, अपाला, घोषा, लोपामुद्रा, मैत्रेयी, अरून्धती, अनुसूया आदि के नाम मिलते हैं।

शकुन्तला ने कण्व ऋषि के आश्रम में और आत्रेयी ने बाल्मिकी आश्रम में शिक्षा प्राप्त की थी। उस समय परिवार द्वारा ही नारियों को शिक्षित करने की परम्परा रही थी। स्त्रियाँ गुरुकुलों में शिक्षाभ्यास नहीं वरन् अपने घरों में ही पिता अथवा पति द्वारा अध्ययन करती थीं।

वैदिक काल में माता गार्गी के शास्त्रार्थ का प्रसंग वृहदारण्यकोपनिषद् में प्राप्त होता है। गर्ग गोत्र में उत्पन्न होने के कारण इन्हें गार्गी कहा जाता है। राजा जनक की सभा में आये हुए अनेक विद्वानों से तथा अत्यन्त प्रतिभा सम्पन्न याज्ञवल्क्य ऋषि से शास्त्रार्थ करने का अवसर उस समय माता गार्गी को प्राप्त हुआ था।

परम विदुषी माता अपाला अत्रि वंश में उत्पन्न हुई थीं। माता अपाला को कुष्ठ रोग था इनके पति ने इन्हें घर से निकाल दिया तो वह अपने पीहर में रहने लगी थीं। इन्होंने वैदिक मन्त्रों के द्वारा इन्द्र को प्रसन्न किया। ब्रह्मवादिनी अपाला द्वारा ही ऋग्वेद के अष्टम मण्डल के 91वें सूक्त की 1 से 7 तक ऋचाओं का संकलन किया गया।

परम आदरणीया घोषा काक्षीवान् ऋषि की पुत्री थी। इन्होंने कई सूक्तों द्वारा अश्विनीकुमारों को प्रसन्न किया जिससे ये रोग मुक्त हो गयीं अर्थात् वैदिक काल में स्त्रियाँ सभा–समितियों में भाग ले सकती थीं। समाज में पारिवारिक रूप से लोग रहते थे जिसका पता ऋग्वेद में वर्णित सूक्ति से लगता है–'मैं कवि हूँ मेरे पिता वैद्य हैं और माता चक्की चलाने वाली हैं' अर्थात् घर के सभी सदस्य भिन्न–भिन्न व्यवसायों के द्वारा जीविकोपार्जन करते थे। तथा स्त्रियाँ अधिकांशतः घर के कार्यों में संलग्न थीं।

वैदिक काल की अपेक्षा महाजनपद काल, मौर्य साम्राज्य में नारी की स्थिति में गिरावट आती गयी। गुप्त काल में स्त्रियों की दशा में थोड़ा सुधार आया कि स्त्रियाँ वैदिक मन्त्रों को सुन सकती हैं। तत्पश्चात बाह्य आक्रमणों का बुरा असर स्त्री समाज पर पड़ने लगा। मुगलकालीन समाज में (हिन्दू/मुस्लिम) पर्दा प्रथा, बाल विवाह जैसी कुरीतियों के द्वारा मातृ शक्ति का ह्रास होने लगा था। वह केवल एक अबला और घर की चारदिवारियों के भीतर ही कैद होकर रह गयी थीं। गरीब घरानों की बेटियों, स्त्रियों का शिक्षा का स्तर निम्न ही बना रहा चूँकि उन्हें कुछ ही समय तक विद्यालय भेजा जाता था। थोड़ी बड़ी होने पर, पर्दा प्रथा, बाल विवाह आदि कुरीतियों के कारण उन्हें घर पर ही रहना पड़ता था। इस काल को स्त्री अन्धार युग भी कहा जा सकता है परन्तु इसके दूसरी ओर शाही, सेठ घरानों की बेटियों, स्त्रियों को घर पर ही शिक्षित करने की व्यवस्था होती थी। उस काल की कुछ विदुषी महिलाओं का वर्णन प्राप्त होता है, इनमें से मुस्लिम विदूषियों में रजिया सुल्ताना, चांद सुल्ताना, गुलबदन बेगम, जेबुन्निसा बेगम आदि तथा हिन्दू विदूषियों में रानी रूपमती, रानी दुर्गावती, इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई और शिवाजी की माता जीजाबाई आदि का नाम प्रमुख है।

उपरोक्त विदुषियों ने समाज को नई दिशा दिखाने का कार्य किया। अपने गौरवपूर्ण साहसी कार्यों द्वारा साहसी पुरुषों की श्रेणी में स्वयं को भी स्थान दिया और प्रमाणित किया कि स्त्रियाँ केवल घर की चारदिवारी ही नहीं अपितु देश की बागडोर को भी भली–भाँति सम्भालकर पुरुषों की अपेक्षा अधिक सफलतापूर्वक अपनी जिम्मेदारियों को निभा सकती हैं।

तत्पश्चात आंग्ल युग में उन महान कुरीतियों का धीरे–धीरे अन्त होने लगा जो पुरातन समय से प्रथा के रूप में चली आ रही थीं, जैसे–बाल विवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा आदि। इस काल में स्त्री शिक्षा तथा स्त्रियों के अधिकारों पर बल प्रदान किया गया। तत्पश्चात् स्वतंत्रता प्राप्ति के अनन्तर संविधान में मौकिलक अधिकारों एवं नीति निर्देशक तत्वों में कुछ अधिकार तथा नियम स्त्रियों की सुरक्षा, शोषण से सुरक्षा आदि को लेकर बनाये गये तथा स्त्री पुरुषों में भेदभाव की नीति को समाप्त कर समानता का दृष्टिकोण उत्पन्न हो, ऐसे प्रयास किये गये। जिससे कि स्त्रियों को भी आगे बढ़ने के सुअवसर प्राप्त हों वह भी अपनी योग्यता तथा अपने विचारों को समाज के सम्मुख प्रस्तुत कर सके।

इस प्रकार भारतीय संस्कृति के पुरातन काल से लेकर वर्तमान काल तक नारी शक्ति के सम्बन्ध में अनेक उतार–चढ़ाव आये जिसमें नारी के अनेक स्वरूप देखने को मिले उसमें उसे कहीं मान मिला तो कहीं अवमानना का ग्रास भी बनना पड़ा तथापि भारतीय संस्कृत साहित्य ने अपने निर्णय हमेशा मातृशक्ति के पक्ष में ही लिये। संस्कृत ग्रन्थों में वेदों से लेकर श्रुति–स्मृति–पुराण, इतिहास आदि से लेकर मनीषियों कवियों की वाणी तक में नारी को अनेक रूप धारण करने वाली कहा है–"जहाँ नारी को सद्गुणों की प्रतिमा, ब्रह्मवादिनी, विदुषी, माता, पत्नी, सती, पतिव्रता, गृहिणी आदि के रूपों में प्रशंसा की गयी है।"[2] सभी ग्रहस्थों के घर में स्त्रियाँ लक्ष्मी समझी जाती हैं। जिस घर में स्त्रियाँ नहीं रहती हैं, वह घर जंगल कहा जाता है।

न गृहं गृर्हामत्याहुर्गृहिणी गृह मुच्यते।।[3]

"घर को घर नहीं कहते अपितु जहाँ जहाँ गृहिणी हो वही घर कहलाता है।" दुर्गाशप्तशती के अनुसार समस्त विद्याएं और समस्त सभी स्त्रियाँ देवी का ही स्वरूप हैं।

विद्याः समस्तास्व देवि भेदाः, स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।।[4]

"नारी जगदम्बिका है, जगत जननी है, सृष्टि स्थिति तथा प्रलयकारी है। उसके अनेक रूप हैं। जब वह पुत्री बनकर आती है तो वह एक कुल की कीर्ति नहीं अपितु दो कुलों को गौरवान्वित करती है। अपनी सहज सरसता के कारण दो अपिरिचित कुलों को एक में सम्बन्धित करती है।"[5]

नारी की सरलता

नारियों में अत्यन्त सरलता होती है। जिसके कारण उसे उदार मना तथा माता भी कहा जाता है। तुलसीदास कृत रामायण में माता सबरी का चरित्र अत्यन्त उदार और सरल प्रतीत होता है। वह स्वयं के लिए ही कहती है।

केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी, अधम जाती में जड़मति भारी।।
अधम ते अधम अधम अति नारी, तिन्ह महँ मैं मति मंद गँवारी।।[6]

किसी के समक्ष विनम्र होना यह सबसे श्रेष्ठ गुण है। माता सबरी ने अपनी ही निन्दा करके मानो स्वयं को रामजी के समक्ष छोटा ही रखने का प्रयास किया है। यह सज्जनों का गुण होता है वह स्वयं को सामने वाले के समक्ष छोटे रूप में देखा करते हैं। यहाँ सबरी माता की सरलता का स्वरूप प्रकट होता है।

नारी में लज्जा

नारी में स्वभावतः ही लज्जा और संकोच होता है। यह उनका एक अच्छा गुण है। चूँकि एक स्त्री की शोभा लज्जा और संकोच होता है। यह उनका एक अच्छा गुण है। चूँकि एक स्त्री की शोभा लज्जा से ही है। लज्जा उनका एक आभूषण ही होता है। वेदों में भी नारी के लिए लज्जा से युक्त होना आवश्यक बताया है।

"यो वां यज्ञे भिरावृतोऽधिवस्त्रा वधूरिव।"[7]

अर्थात् वस्त्र द्वारा आवृत्त वधू की भाँति जो यज्ञ के द्वारा आवृत्त है। इसमें नारी को अपने अंगों को ढके रहने के निर्देश दिये हैं। महाभारत ग्रन्थ में भी दम्यन्ती का चरित्र देखने को मिलता है। जिस समय वह पति वियोग में भटकती हुई चेदि नरेश के राजमहल पहुँची वहाँ उन्होंने राजमाता से निवेदन किया कि "मैं परपुरुषों से कभी वार्तालाप नहीं करूंगी मैं केवल स्त्रियों से ही बातें करूँगी।" इससे स्पष्ट है कि माता दयमन्ती लज्जा आदि गुणों से सम्पन्न रही होंगी। रामायण में भी प्रसंग है जब भगवान श्रीराम के साथ सीता जी वन में जाने लगी तब वहाँ की वनवासिनों ने सीता जी से राम का परिचय पूछा तब माता सीता जी संकुचित हो गयी तथा उन्होंने अपने सिर पर आंचल रखा और एक संकेत भाव से श्रीराम का परिचय दिया–

बहुरि बदन विधु आँचल ढाकी, पिय तन चितइ भौंह करि बांकी।।

यह लज्जा का परम आदर्श है। ऐसी पवित्र नारियाँ भारतीय समाज का गौरव हैं।

पर्दा–प्रथा का अभिप्राय

ध्यात्य है कि नारी के उत्थान में उसके विकास में पर्दा प्रथा अत्यन्त बाधक रही है। पर्दा प्रथा के सम्बन्ध में अनेक मत–मतान्तर हैं। अनेक लोगों की दृष्टि में यह प्रथा उत्तम है। कुछ इसे अत्यन्त निकृष्ट मानते हैं। परन्तु पर्दा प्रथा अत्यन्त प्राचीन समय से रही है। संस्कृत में पर्दे के सम्बन्ध में 'अवगुण्ठन' शब्द का प्रयोग आया है। और इस पर्दे का अर्थ स्वयं को वस्त्र से ढंक लेना नहीं अपितु बड़ों के प्रति आदर का भाव लाकर संकोच वशात् अपने शीर्ष को अपने आँचल से ढक लेना है। अर्थात् बड़ों, ज्येष्ठ जनों के प्रति आदर का भाव प्रकट करने से है। परन्तु कालान्तर में इस प्रथा ने अत्यन्त भयानक रूप धारण कर लिया जिससे नारी जाति के विकास का अपकर्ष हुआ। उसका विकास अधोन्मुखी हो गया। इसी पर्दा प्रथा के कारण छोटी–छोटी बालिकाओं को विद्या से वंचित रखा गया तथा स्त्रियों को चारदिवारियों के भीतर कैद करने में पर्दा प्रथा का बड़ा योगदान रहा।

परन्तु आधुनिक परिपेक्ष्य में यह विचारणीय है कि पर्दा प्रथा को कितना महत्व देना चाहिए यदि इसकी समीक्षा की जाये तो ऐसी पर्दा प्रथा को क्या महत्व देना जो नारी को उसके उत्थान और विकास को दूर कर दे वह केवल घर की दिवारों के भीतर कैद होकर रह जायें। आखिर नारी भी तो समाज का हिस्सा है उसे भी तो नर के समान समाज में जीने का अधिकार है। अतः उस पर्दा प्रथा का तो विरोध होना ही चाहिए जो उनके उत्थान में बाधक है परन्तु यह भी विचारणीय है कि ऐसी पर्दाहीनता का भी समर्थन नहीं किया जा सकता जो समाज को सभ्यता से दूर कर निर्लज्ज और निःसंकोची बना दे। पर्दे का एक अर्थ मर्यादित रहना या अत्यन्त आदर के साथ रहना या पर्दे से अभिप्राय दूसरों के प्रति सम्मानपूर्वक रहना भी हो सकता है। जिस प्रकार घर की चारदिवारियों के भीतर कैद तथा पर्दा प्रथा के कारण घर में घुटती नारी एक केवल असभ्यता का पर्याय है उसी तरह एक पर्दाहीन यानि सभ्यता, लज्जा, संकोच तथा मर्यादा से हीन नारी भी तो समाज में असभ्यता का ही पर्याय होगी।

अतः पर्दे से अभिप्राय केवल सिर के ऊपर वस्त्र डाल लेने से नहीं अपितु सहज शील, संकोच, मर्यादा के भाव से है। अतः ऐसा अवगुण्ठन होना तो आवश्यक ही है जो नारी का स्वाभाविक गुण है। उसका एक श्रृंगार का अंग भी है। यह एक ऐसा पर्दा है जो उसे संस्कारों से जोड़े रखता है। अतः नारी ही क्या नर में भी बड़ों के प्रति शील–संयम, संकोच तथा सत्कार का पवित्र भाव तो होना ही चाहिए। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यही पर्दे का अर्थ हुआ।

नारी निन्दनीय नहीं अपितु वन्दनीय

श्रुति, स्मृति, पुराण आदि में कई स्थानों पर स्त्री की अनेक स्थानों पर प्रशंसा की गई है। ऋग्वेद में सीता की स्तुति की गई है। *"सौभाग्यवती सीता! हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम हमें धन और सुन्दर फल दो।"*[8] ऋग्वेद में लगभग तीन सौ बार उषा देवी का स्तवन किया गया है। "सूर्य की पुत्री का नाम सूर्या है। इन्हें ऋग्वेद में देवी और ऋषिका भी कहा है। सूर्या ने दशम मण्डल के 85वें सूक्त का साक्षात्कार भी किया है। इन्द्राणी इन्द्रदेव की पत्नी हैं। इनका एक नाम शची भी है। *"ऋग्वेद में दशम मण्डल, सूक्त 145 की ऋषिका भी ये ही हैं। इसी प्रकार अनेक स्थानों पर सरस्वती, वाक्, इला, भारती, होला, अंगु तथा श्रृद्धा आदि देवियों का यथा स्थान वर्णन है। इससे यह विदित होता है कि आर्य लोग नारियों का बड़ा सम्मान करते थे।*[9]

जहाँ एक ओर दिखता है कि नारी की महिमा और प्रशंसा के गुण गाये गये वहीं एक ओर ग्रन्थों में नारी की यत्र–कुत्र निन्दा भी देखने को मिलती है। यद्यपि नारी निन्दा की अपेक्षा नारी–स्तुति के प्रसंग ज्यादा हैं परन्तु फिर भी यत्र कुत्र स्थानों में निन्दापरक बातों को देखते हुए कई बुद्धिजीवियों का मानना है कि 'शास्त्रों की रचना पुरुषों ने की तथा जानबूझकर उन्होंने नारी की निन्दा करके उसका अपमान किया है। परन्तु इन तत्वों का समीक्षात्मक अध्ययन करने से मालूम होता है कि शास्त्रकार निष्पक्ष थे जहाँ उन्होंने प्रशंसा की आवश्यकता समझी वहाँ मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की परन्तु जहाँ सुधारात्मक परिवर्तन चाहा वहाँ किंञ्चित निन्दा का भी उन्होंने आश्रय लिया।

परन्तु वह निन्दा किस हेतु की गयी वह भी विचारणीय है। कहीं–कहीं पर महापुरुष अभद्रा नारियों की निन्दा के लिए विवश भी रहे होंगे जैसे सूर्पणखा के प्रसंग में उसके अनुचित तथा कामोत्तेजक व्यवहार से महापुरुषों को व्याघात हुआ होगा इसलिए उन्होंने ऐसी आचरण भ्रष्ट नारियों हेतु निन्दा का आश्रय लिया होगा। यदि देखा जाय तो स्त्री निन्दा दो दृष्टियों में की गयी है– *"एक तो ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संयासी के मन से स्त्रियों की ओर वैराग्य उत्पन्न करने के लिए नारी संसर्ग को घातक बताया तथा दूसरी ओर उन दुष्टा स्त्रियों की निन्दा की गयी है जो लज्जा को तिलांजलि दे अधर्म के मार्ग पर चलती हैं। वह वास्तव में नारी निन्दा नहीं दुर्गुण दुराचार की निन्दा है। दुराचार परायण पुरुष हो या स्त्री सभी निन्दा के पात्र हैं।"*[10] अतः यही विचार करना चाहिए कि यत्र–तत्र निन्दा का आश्रय लेकर ग्रन्थकार स्त्री जीवन में बुराइयों या कमियों या असंस्कारों को दूर कर एक सभ्य नारी का निर्माण करना चाहते होंगे अन्यथा तो उनकी दृष्टि में सदा से नारियों का सम्मान ही रहा है।

सती स्त्री की महिमा ब्रह्म वैवर्त पुराण में इस प्रकार हैः–

पृथिव्यां यानि तीर्थानि सती पादेषु तान्यपि।
तेजश्च सर्व देवानां मुनीनां च सतीसु वै।
सतीनां पाद रजसा सद्यः पूता वसन्धुरा।।[11]

अर्थात् पृथ्वी के समस्त तीर्थसती स्त्री के चरणों में निवास करते हैं। समस्त देवताओं और ऋषियों का तेज भी सती स्त्रियों में स्वभावतः ही रहता है। सती स्त्रियों की चरण धूली से पृथ्वी तत्काल पवित्र हो जाती है।

अपि च–

उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।
सहस्रं तु पितृन् माता गौरवेणातिरिच्यते।।[12]

अर्थात् दश उपाध्यायों की अपेक्षा आचार्य, 100 आचार्यों की अपेक्षा पिता तथा हजार पिताओं की अपेक्षा एक माता का गौरव अधिक होता है। भारतीय अनेकानेक ग्रन्थों में स्त्रियों के समान के लिए बार–बार निर्देश दिये गये हैं। जिस कुल में बेटी बहिन, पत्नी, माँ

या अन्य जो भी घर में स्त्री रूपा हो वह यदि दुःख के कारण शोक करती है तो उस कुल का शीघ्र विनाश होता है अर्थात् घर में नारी सदैव प्रसन्न रहे वह कभी दुखित ना रहे यह निर्देश धर्म ग्रन्थों के हैं।

अतः नारी स्वभावतः ही सरल सहज और विनम्र होती है। नारी हमारे समाज का अतिशय महत्वपूर्ण अंग है जिसके बिना सृष्टि की कल्पना कर पाना कठिन है। नारी मंगला है वह श्रेयशा है। दुर्गा शप्तशती में श्रेष्ठ नारी की प्राप्ति की कल्पना की गयी है–

पत्नीं मनोरमांदेहि मनोवृत्तानुसारिणीम्
तारिणीं दुर्ग संसार सागस्य कुलोद्भवाम्।।[13]

उपरोक्त विचारों द्वारा भारतीय संस्कृति में नारी का स्वरूप और नारी का महत्व समझने का प्रयास किया गया है। नारी चरित्र वास्तव में एक विलक्षण चरित्र है। वह अपनी श्रेष्ठ बुद्धिमत्ता के द्वारा तथा सत्संकल्पों के द्वारा एक अच्छे समाज का निर्माण करने में सहायक है। समाज का मूल आधार नारी है। अतः नारी चरित्र वन्दनीय है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. मनुस्मृति
2. नारी अंक (कल्याण) पृष्ठ सं0 94
3. नारी अंक (कल्याण) पृष्ठ सं0 22
4. दुर्गा शप्तशती।
5. नारी अंक (कल्याण) पृष्ठ सं0 28
6. रामचरितमानस
7. ऋग्वेद–8/4/26
8. वेद–4/75/6–7
9. नारी अंक (कल्याण) पृष्ठ सं0 112
10. नारी अंक (कल्याण) पृष्ठ सं0 123
11. ब्रह्मवैवर्तपुराण
12. मनुस्मृति–2/145
13. दुर्गा सप्तशती